International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 4; July 2017; Page No. 25-26

प्रेमचंद की कहानियॉ और स्त्री संवेदना

डॉ0 हरीश कुमार सोनी

चंद्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय सुसंस्कृत समाज स्त्री को जहां पूर्णता का प्रतीक मानता है वहीं उसे दोयम दर्जे का स्थान प्राप्त है। यह स्थिति आज की नहीं वरन् प्राचीन काल (आदिकाल) से चली आ रही है। परिवर्तन तो प्रकृति का नियम है, सो नारी की स्थिति में भी अमूल–चूल परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। नारी के अनेक रूप है– वो त्याग, समर्पण, स्नेह, प्रेम, मां, बहिन, पत्नी, प्रेमिका, और अन्य रूपों में दिग्दर्षित होती है। जहां स्त्री सरल हृदय है, सरस्वती है वहीं समय समय पर वो दुर्गा, चण्डी और काली का रूप भी धर लेती है। स्त्री के बिना संसार की कल्पना करना भी बैमानी सा ही लगता है। स्त्री के बिना संसार की रचना असम्भव है, अपूर्ण है। भगवान शंकर (अर्द्धनारीश्वर) भी नारी (पार्वती) के बिना अस्तित्वहीन हैं। सीता, सावित्री, तारावती, द्रोपदी, अहिल्या और लक्ष्मीबाई आदि कई स्त्रियां कई कारणों से विश्वविख्यात है। मुंशी प्रेमचंद की कहानियों के नारी पात्र सर्वोत्कृष्ट और सकारात्मक चरित्रों के पुरोधा है। संवेदना के धरातल पर तो ये नारी पात्र अद्वितीय और अविस्मरणीय है। ये पात्र संवेदना का पर्याय बने हुए हैं।

स्त्री शक्ति को विशेष रूप से समाज में सर्वोत्कृष्ट माना गया है और है भी। यत्र तत्र हम सुन सकते हैं कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।' पर क्या वास्तविक धरातल पर यह सत्य है ? जो हो। लेकिन प्रेमचंद की कहानियों में स्त्री संवेदना अपना असर अवश्य दिखाती है। इन पात्रों की संवेदना से पाठक और स्रोता संवेदित न हो यह असम्भव ही प्रतीत होता है। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में स्त्री पात्रों का सुन्दर और सशक्त अंकन किया है। उनके नारी पात्र पग–पग पर समस्याओं से जूझते और संघर्ष करते हुए भी कहीं भी हताश या निराश नही होते बल्कि कष्टों का सामना करते हुए आगे बढ़ते हुए नज़र आते हैं, नयी जीवन शक्ति की ओर दृढ संकल्पित हो अनवरत चलते दिखते हैं। ''प्रसाद, प्रेमचंद, जैनेन्द्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय आदि रचनाकारों ने स्त्री की शारीरिक नहीं अपितु आंतरिक सुचिता को केन्द्र में रखकर भारतीय स्त्री की गरिमा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया।''[1]

प्रेमचंद के नारी पात्रों की संवेदना केवल कागज़ के सफेद पन्नों पर ही नही झलकती अपितु सहृदय के हृदय में तटस्थ भाव से हिलोर लेती नजर आती है। पाठक भी बड़े सहज भाव से संवेदन–सरिता में बह जाते हैं। प्रेमचंद की कहानियों में संवेदना के बादल छाते भी हैं, घुमड़ते भी हैं, गरजते भी हैं और जोरदार ढंग से बरसते भी है साथ ही मानव मन को संवेदित होने के लिये विवश भी करते हैं।

महान अम्बेडकर जी के महान आंदोलन के तुरन्त बाद प्रेमचंद ने 'ठाकुर का कुंआ' कहानी लिखी जिसमें नारी की स्थिति का खुलासा बेहतरीन ढंग से किया है। उस काल में छुआ छूत अपने चरम पर थी और दलित को हेय दृष्टि से देखा जाता था। उन्हें छूना अर्थात अपवित्र होना समझा जाता था। उनके मोहल्ले, उनके जलस्रोत आदि सब अलग ही रहते थे। प्रेमचंद ने इस स्थिति को देखा, परखा और फिर उसे कहानी में उजागर किया। कहानी की प्रधान पात्र 'गंगी' है जो रात के अंधेरे में ठाकुर के कुए पर पानी लेने जाती है, जो सवर्णो का था। क्योंकि दिन में यह सम्भव नहीं होता है। कुंए पर पहुंचने से पहले 'गंगी' ने दो स्त्रियों को, जो पहले से ही वहां मौजूद थी, बात करते सुना ''हम लोगों को आराम से बैठे देखकर जैसे मरदों को जलन होती है। हां, यह तो न हुआ कि कलसिया उठाकर भर लाते। बस, हुकुम चला दिया कि ताजा पानी लाओ, जैसे हम लौंडिया ही तो है।''[2] यहां पुरूष की स्त्री के प्रति रूग्ण भावना परिलक्षित होती है। स्त्रियों को मात्र भोग विलास की वस्तु समझा जाता है, जो सरासर अनुपयुक्त है। स्त्री के मुख से निःसृत शब्द 'लौंडियां' स्त्री की पराधीनता की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं और स्त्री का मूक क्रोध उजागर करते हैं। उन स्त्रियों के जाने पर 'गंगी' ने पानी भरा लेकिन ठाकुर को आता देख वह सब कुछ छोड़–छाड़ कर भाग गई जैसे सूर्य को आता देख ओस–बूंदें कहीं खो सी जाती है। यदि ठाकुर साहब 'गंगी' को देख लेते तो भूचाल ही आ जाता। उन स्त्रियों के संवाद में और 'गंगी' के भाग जाने में कहीं न कहीं डर और स्त्री–पुरूष के बीच की खाई साफ झलकती है। एक महान लेखक 'यशपाल' ने तो यहां तक कह डाला कि 'मौजूदा समाज में नारी प्रेम एक सौदा मात्र है। नारी जीवन यापन के लिए एक आश्रय चाहती है, जिसे प्रेम का नाम दिया जाता है' ये शब्द भी नारी के प्रति पुरूष सोच को दिखाता है। प्रेमचंद की एक कारूणिक कहानी 'कुसुम' है जिसकी प्रधान पात्र का नाम कहानी के नाम पर ही है। 'कुसुम' का दुख और दर्द देखकर कवि नवीन व्यथित और संवेदित होकर कराह उठते है। 'कुसुम' का ब्याह हुआ और गोना हुए बस एक बरस ही हुआ था और वह सिर्फ तीन बार ही ससुराल गई थी। पति महाशय तो बड़े बेदर्द पुरूष थे, इतने कि 'कुसुम' की कराह से उन्हें असीम सुकून मिलता था। कवि नवीन संवेदना के वशीभूत हो करूण स्वर में कहते हैं ''वही कुसुम आज अपने पति के निर्दय व्यवहार के कारण रो–रोकर प्राण दे रही है।''[3] पति–पत्नी का रिश्ता शारीरिक के साथ आत्मिक हो तभी सार्थकता ग्रहण करता है, नही तो 'बिना सांप की बाबी', 'बिना दीवारों का घर' और 'जड़ विहीन वृक्ष' का सा हो जाता है। आत्मिक मिलन नही तो जीवन नही। पति के निर्दय व्यवहार से जहां 'कुसुम' दुःखी है वहीं पाठक भी उसकी वेदना से संवेदित हो जाते हैं। उसका जीवन दुःख का पर्याय बन गया है। पति है, प्रेम भी है, लेकिन सिर्फ दिखावे के लिये। इसी प्रकार 'विध्वंस' कहानी अत्यंत सशक्त और संवेदना से सराबोर है। कहानी का दृश्य विधान तो पाठकों के सामने हुबहू चलचित्र सा दिखता है। पाषाण हृदय को भी पिघलाने की सामर्थ्य यह कहानी रखती है। कहानी की नारी पात्र 'भुनगी' अत्यंत दीन और दुःखी है। वह विधवा, सांतनहीन और अकेलेपन के वलय से घिरी है, भाड़ चलाकर अपना गुजर–बसर करती है। 'भुनगी' गांव के मुखिया का नाज पहले सेंकती है और बाद में दूसरों का। एक दिन 'भुनगी' को नाज भूनने में देरी क्या हो गई कि ज़मीदार का गुस्सा ज्वालामुखी की भांति कहर बरपा गया। ज़मीदार के लोगों ने 'भुनगी' का भाड़ तहस–नहस कर दिया। 'अभागिन विधवा उस वृक्ष की भांति हो गई जिसमें न तो कोई शाखें बची है और न ही कोई पत्ते।' लेकिन अब

'भुनगी' की जीवन शक्ति ने जोर पकड़ा और फिर से भाड़ बनने लगा। ज़मीदार उदयभान सिंह फिर से क्रोधित हो जलजला बन कर आ गया और बोला, ''किसके हुक्म से? भुनगी ने हकबका कर देखा तो सामने ज़मीदार महोदय खड़े हैं। 'उदयभान सिंह' ने फिर से पूछा– किसके हुक्म से बना रही है ?''4 ज़मीदार के शब्दों से ऐसा लगता है कि स्त्री स्वतंत्र न हुई, हुक्म की गुलाम हो गई। कहा जाता है कि स्त्री–पुरूष गाड़ी के दो पहिये हैं, दोनों बराबर है, दोनों बराबर सम्मान के अधिकारी हैं, लेकिन यहां तो ज़मीदार के शब्दों से तो 'बराबर' का कोई अर्थबोध नहीं होता है। अब ज़मीदार ने भाड़ को आग के हवाले कर दिया, चारों ओर चीत्कार और हाहाकार मच गया। आग की लपटें अपने पूरे यौवनाजोश पर थी और ऐसा लग रहा था मानो आकाश का चुम्बन ले रही हो। ''भुनगी अपने भाड़ के पास उदासीन भाव से खड़ी वह लंकादहन देखती रही। अकस्मात वह वेग से आकर उसी अग्निकुंड में कूद पड़ी। लोग चारों तरफ से दौड़े, लेकिन किसी की हिम्मत न पड़ी की आग के मूंह में जाय। क्षण मात्र में उसका सूखा हुआ शरीर अग्नि में समाविष्ट हो गया।''5 इस जोशीली आग ने आस पास की झोपड़ियों सहित ज़मीदार की हवेली को भी खण्डहर में तब्दील कर दिया। इस दृश्य ने विशेषतः 'भुनगी' के दुःख और पीड़ा ने सभी को करूणा से भर दिया और पाठक ह्रदय भी द्रवीभूत हो गया। इसी प्रकार की कहानी 'सुभागी' है जिसमें मजदूरिन नारी का दृश्य साकार होता दिखता है। यह कहानी आज भी प्रासंगिक है और समाज में यत्र तत्र देखी जा सकती है। 'तुलसी महतो' अपने पुत्र 'रामू' और पुत्री 'सुभागी' को समान रूप से प्रेम करता है। 'रामू' काठ का उल्लू, निहायती निकम्मा और आलसी है जबकि 'सुभागी' अपने कर्त्तव्य को ही सर्वोपरी मानती है। 'सुभागी' महज ग्यारह वर्ष की उम्र में ही विधवा हो गई। उससे दूसरे विवाह का बोला लेकिन हर बार वह मना कर देती। इतनी कम उम्र में दुःखों का पहाड़ जहां 'सुभागी' के लिये कष्टदायी है वहीं पाठक भी 'सुभागी' की वेदना से संवेदित है। अब उज्जड़ 'राजू' बोला, ''तुम अगर सोचती हो कि भैया कमावेंगें और मैं बैठी मोज करूंगी, तो इस भरोसे न रहो। यहां किसी के जनम भर का ठीका नहीं लिया है।''6 यहां 'रामू' की सोच कुरूप और जीवन दर्शन रूग्ण सा लगता है जो बहन को बोझ कहता है। 'रामू' की करूणा और संवेदना शून्य है, उसकी सोच ने उसे बोना साबित कर दिया है। 'रामू' अलग हो गया और अब 'सुभागी' ही 'तुलसी महतो' की देखरेख करती थी। 'सुभागी' की कर्त्तव्यपरायणता और कर्मशीलता पर सारा गांव नाज करता था। जहां जन–समूह होता है वहां 'हजार मुख हजार बातें' होती है लेकिन यहां तो 'हजार मुख और सिर्फ एक ही बात' होती थी और वह थी– 'सुभागी' की प्रशंसा। गांव के वरिष्ठ नागरिक 'सज्जनसिंह' तो यहां तक कहते थे कि 'यह उस जनम की देवी है।' कुछ दिन बाद 'महतो' पंचतत्व में विलीन हो गये। कुछ दिन पश्चात् 'सुभागी' की मॉ भी मरणासन्न हो उसे आशीर्वाद देकर बोली, ''तुम्हारी जैसी बेटी पाकर तर गयी। मेरा क्रिया–कर्म तुम्ही करना। मेरी भगवान से यही अरजी है कि उस जन्म में भी तुम मेरी कोख पवित्र करो।''7

अब 'सुभागी' अकेली रह गई लेकिन गांव वालों की करूणा और संवेदना हमेशा उसके साथ थी। पाठक भी 'सुभागी' की स्थिति से व्याकुल हो जाते थे।

निष्कर्ष

प्रेमचंद की सभी कहानियों में नारी की करूण गाथा का यथार्थ और सार्थक रूप प्रदर्शित होता है। इस पुरूष प्रधान समाज ने नारी को 'नारी तू नारायणी' कहा है और देवी तुल्य माना है। जहां तक मेरा व्यक्तिगत मत है नारी को सिर्फ देवी तुल्य माना ही है, वास्तविक धरातल पर उसके साथ पक्षपात का व्यवहार किया जाता है जबकि वाकई में नारी शक्ति–स्वरूपा है। कहानियों में कई स्थानों पर जातिगत ऊंच–नीच और भेद–भाव अपना असर दिखाते नजर आते हैं। 'गंगी' 'भुनगी' और 'सुभागी' ने अपना कर्त्तव्य पालन किया, अनेक कष्ट सहे और संघर्ष करती रही, तभी तो इनके दुःखों से पाठक द्रवित से दिखते हैं। इन नारी पात्रों की वेदना से सह्रदय पाठक अवश्य द्रवीभूत होते हैं और संवेदना से भर जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. अंतिम दशक की हिन्दी कहानियां : संवेदना और शिल्प : डॉ नीरज शर्मा : पृष्ठ 92।
2. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 2' : ठाकुर का कुंआ : पृष्ठ 96।
3. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 2' : कुसुम : पृष्ठ 35।
4. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 1' : भुनगी : पृष्ठ 27।
5. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 1' : विध्वंस : पृष्ठ 28।
6. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 1' : सुभागी : पृष्ठ 657।
7. प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियां 'मानसरोवर – 1' : सुभागी : पृष्ठ 661।